भारतीय राजनैतिक चिन्तन और नैतिकता : वर्तमान में प्रासंगिता

डॉ. भावना यादव
सहायक प्राध्यापक-राजनीति विज्ञान
शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

राजनीति शब्द अपने आप में व्यापक और जटिलताओं से भरा है ये ऐसा शब्द है जिसके अर्थ पर सर्वानुमति से सभी एकमत हो सकें, संतुष्ट हो सकें ऐसा नहीं है। कारण है हर व्यक्ति अपनी परिस्थितियों और देश काल के अनुसार इस शब्द के अर्थ की व्याख्या करता है। यदि हम राजनैतिक चिंतन की बात करते हैं तो "प्राचीन राजनैतिक चिंतन इतिहास का वह पक्ष है जिसने इतिहास के प्रवाह को बदला है और उसकी शक्ति उनके विश्लेषणात्मक चिन्तन में अन्तनिर्हित है। इनमें से कुछ प्रवृत्तियाँ तो ऐसी हैं जो ऐतिहासिकता और विश्लेषणात्मकता की दोनों ही कसौटी पर महत्वपूर्ण है।"[1]

भारतीय राजनैतिक चिंतन में नैतिकता ऐसी ही स्थाई प्रवृत्ति रही है। राजनीति में नैतिकता वह तत्व है जो राजनीति को उच्छंखल और अराजक होने से रोकता है। नैतिकता के कारण ही राजनीति लोक कल्याणकारी और हितकारी स्वरूप को प्राप्त करती है। इतना ही नहीं किसी राजनीतिज्ञ का आचरण तभी श्रेष्ठ होगा जबकि उसमें नैतिकता का समावेश हो। परन्तु बदलते समय, विकास और पश्चिम के अन्धानुकरण में हम भारतीय राजनैतिक चिंतन की इस समृद्ध नैतिकता की अवधारणा को कहीं पीछे छोड़ आगे बढ़ गये। परिणाम हमारे समक्ष है। वर्तमान में राजनीति शब्द नकारात्मकता को प्रदर्शित करता है। जिस राजनीति की शक्ति और प्रभाव से सामान्य जनता प्रभावित तो होती है परन्तु उससे बचकर निकलना चाहती है। यह वर्तमान स्वरूप है राजनीति का। परन्तु प्राचीन भारतीय राजनैतिक चिंतन जो नैतिकता पर आधारित था। आज भी प्रासंगिक है। बात चाहे रामायण महाभारत की करे या वेद पुराणों की ऐसे असंख्य उदाहरण हमें प्राप्त होते हैं जिनमें राजनीति में नैतिकता को अनिवार्य और आवश्यक माना गया है। साथ ही जहाँ-जहाँ नैतिकता छूटी वहाँ-वहाँ राजनीति का पतन हुआ।

महाभारत काल ये राजनैतिक चिंतन नैतिकता और धर्म को प्रधानता दी गई। महाभारत युद्ध पश्चात् सत्ता संभालने को तैयार युधिष्ठिर को पितामह भीष्म द्वारा उच्च राजनीतिक मूल्यों से अवगत कराया गया जिसे 'शांति पर्व' के नाम से जाना जाता है। 'शांति पर्व' में 'राजधर्मानुशासन' अध्याय राजनीति में नैतिकता की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।" राजधर्म में राजा से यह अपेक्षा की गई है कि वह स्वयं तो नैतिकतापूर्ण आचरण करेगा ही, प्रजा को भी सच्चे रास्ते पर चलाएगा। उसे प्रजा की रक्षा करनी चाहिये। उसे भयमुक्त रखना चाहिये, दुःख और अत्याचार से पीड़ित लोगों की सहायता करनी चाहिये, सभी प्राणियों के प्रति दया भाव रखना चाहिये तथा धर्म की रक्षा के लिये रणभूमि में प्राण त्याग देने चाहिये। 'शांति पर्व' में कहा गया है कि राजधर्म अन्य सभी धर्मों से श्रेष्ठ है क्योंकि यह सबको दुराचार के मार्ग से हटाकर सदाचार की ओर प्रेरित करता है।

सदाचार, नैतिकता और मूल्य क्या है जिनकी आवश्यकता प्राचीन काल से आज तक हर मनुष्य को जीवन के हर क्षेत्र और विषय में है। वास्तव में मूल्य एक सामाजिक अवधारणा है। प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री रमनबिहारी लाल के अनुसार "किसी समाज के वे विश्वास, आदर्श, सिद्धांत, नैतिक नियम और व्यवहार मानदण्ड जिन्हें समाज के व्यक्ति महत्व देते हैं और जिनसे उनका व्यवहार निर्देशित एवं नियंत्रण होता है उस समाज और उसके व्यक्तियों के मूल्य होते हैं।"[2]

नैतिकता मूलतः हमारे आचरण से सम्बन्धित है। नैतिकता शब्द 'नीति' शब्द से व्युत्पन्न हुआ है। नीति का धातुमूलक शब्दार्थ है - ले जाने वाला।"[3] अर्थात् नीति कहाँ और किसको ले जाती है, तो नीति अथवा नैतिकता व्यक्ति तथा समाज को कुमार्ग से सन्मार्ग की ओर अन्धकार से प्रकाश की ओर, अनृत से ऋत की ओर, मृत्यु से अमरता की ओर, अशुभ से शुभ की ओर और प्रेयस से श्रेयस की ओर ले जाती है। तात्पर्य यह है कि नैतिकता वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन के मूल्य से सन्निहित नियमों, सिद्धांतों एवं तत्वों का बोध कराती है। इसलिये शुक्र नीति में नैतिकता के बिना समस्त लोक के व्यवहार की स्थिति असंभव बताई गई है।"[4] "वहीं हितोपदेश में कहा गया है कि नैतिकता के शिथिल हो जाने पर समस्त संसार की दुर्दश हो जाती है।"[5]

नैतिकता का प्रश्न चरित्र और धर्म से जुड़ा है। वास्तव में धर्म और नैतिकता एक दूसरे के पूरक है। 'धारयते इति धर्म' अर्थात जो धारण किया जाये वही धर्म है। इसी प्रकार "नैतिकता नीति शब्द से बनी भाववाचक संज्ञा है। जिसका अर्थ भावना के संदर्भ में लिया जाता है। 'नीयते इति नीतिः' अर्थात जो आगे ले जाये वह नीति है। मनुष्य को आगे या अभ्युदय की ओर ले जाने वाले उसके गुण एवं विवेक है। अस्तु नीति, गुणों, अच्छाइयों एवं विवेक का समन्वित रूप है। गुणों के अन्तर्गत कर्त्तव्यपराणता, आदर्श पालन, परंपरानुसरण आदि सभी आते हैं जिन्हें अंग्रेजी का शब्द 'मोर्स' अभिव्यक्त करता है। अब नैतिकता शब्द के अर्थ की ओर ध्यान देना चाहिये। नैतिकता नीति के प्रति चेतना और भावना तथा उसकी स्वीकृति होती है। जो मनुष्य अपने व्यवहार में प्रकट करता है। अतः धर्म आदि गुणों को धारण करता है तो नैतिकता उनके प्रति पायी जाने वाली चेतना और भावना की स्वीकृति है।"[6] दूसरे शब्दों में "जीवन की सामंजस्यपूर्ण अवस्था ही नैतिकता है यदि धर्म धारणा है तो नैतिकता क्रिया, यदि धर्म सिद्धांत है तो नैतिकता आचरण, यदि धर्म जीवन दर्शन है तो नैतिकता जीवन शैली। इस प्रकार धर्म मानव जीवन का दार्शनिक एवं सैद्धांतिक पक्ष प्रस्तुत करता है और नैतिकता उसके आचरण का नियमन। यही धर्म और नैतिकता मनुष्य को अन्य पदार्थों एवं जीवों से ऊँचा उठाते हैं।"[7] प्राचीन भारतीय राजनैतिक दर्शन में इसी नैतिक दर्शन को महत्व दिया गया। आचार्य मनु ने राजनीति को नैतिक व्यवस्था के सूत्रें में बाँधा और धर्म की प्रबलता को स्पष्ट किया। मनु स्मृति में वे कहते हैं -

'सर्वतो धर्मषड् भागो राज्ञो भवति रक्षितः। अपधर्मादपि षड्भागी भवत्यस्य ह्यरक्षितः।।

अर्थात् धर्म की रक्षा होने पर राजा सबके धर्म के छठे भाग का अधिकारी होता है साथ ही धर्म की रक्षा न होने पर वह अधर्म के छठे भाग लिए भी उत्तराधिकारी होता है। अर्थात् धर्मानुसार आचरण राजा की प्राथमिकता होनी चाहिये।

भारतीय राजनैतिक चिंतन की नैतिकता आधारित परंपरा आधुनिक राजनैतिक चिंतकों तक प्रचलित रही है। जिसमें महात्मा गाँधी का नाम उल्लेखनीय है उनके राजनैतिक दर्शन में अहिंसा, सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा और असहयोग नैतिकता से जुड़ी राजनीति के मुख्य अवयव थे। गाँधी जी नैतिक दार्शनिक थे, उन्होंने

"राजनीति और नैतिकता के बीच पुल का निर्माण करते हुए यह तर्क दिया कि राजनीति के क्षेत्र में साधन और साध्य दोनों समान रूप से पवित्र होना चाहिये। उनका यह भी विचार था कि आध्यात्मिक आधार के बिना राजनीति स्वच्छ नहीं रह सकती है। गाँधी जी ने "धर्म को जीवन और समाज का आधारभूत तत्व स्वीकार किया और कहा कि इसको निकाल देने से व्यक्ति और समाज दोनों निष्प्राण और शून्य हो जाते हैं। धर्म से गाँधीजी का अभिप्राय किसी औपचारिक और रूढ़िगत धर्म से नहीं है वरन् विश्व के व्यवस्थित नैतिक अनुशासन से है।"[8] गाँधी जी का मानना था कि प्रत्येक राजनीतिक कृत्य या संस्था को नैतिक कसौटी पर कसना आवश्यक है। उन्होंने हमेशा साधन को साध्य के पहले रखा और बताया कि जैसा साधन होगा वैसा ही साध्य होगा। यदि साधन अनैतिक होंगे तो साध्य चाहें कितने भी नैतिक क्यों न हो वह अवश्य भ्रष्ट हो जायेंगे।

समय के साथ राजनीति में नैतिकता का अंश धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। आज राजनीति स्वार्थ, संकीर्णता और अहंकार से अभिशप्त है, और केवल सत्ता शक्ति तक सीमित रह गई है। यही कारण है कि नागरिकों का लोकतन्त्र में विश्वास कम हुआ है जिसका प्रकटीकरण चुनावों के दौरान 'कम मतदान' में दिखाई देता है। प्रतिनिधियों के प्रति जनता की आस्था कम हुई है। इतना ही नहीं भ्रष्टाचार, मँहगाई, आतंकवाद, गरीबी, बेरोजगारी, आर्थिक असमानता और ऐसी ही दैनिक जीवन से जुड़ी अनेकों समस्याओं के कारण नैतिकता विहीन, राजनीति के परिणामस्वरूप समाज में दिखाई दे रहे हैं।

वर्तमान में राजनीति अर्थात् राज्य की नीति से यह अपेक्षा की जाती थी कि अन्याय और अत्याचार भेदभाव, बेईमानी से मुक्त वातावरण जनता को उपलब्ध करवायेगी वहीं राजनीति नैतिकता से विमुख होकर स्वयं ही भय, अन्याय, बेईमानी, भ्रष्टाचार, भेदभाव की पोषक बन गई है। ऐसे में आवश्यकता है प्राचीन भारतीय राजनैतिक चिंतन परंपरा जिसके वाहक श्रीराम, भरत, हरिशचन्द्र थे उसका तथा गाँधी, गोखले, तिलक टेगौर, स्वामी दयानंद सरस्वती, ज्योतीबाफुले, जयप्रकाश नारायण जैसे आधुनिक राजनैतिक चिंतकों के चिंतन को पुनः स्थापित करने हेतु प्रयत्न करने होंगे। ताकि राजनीति में नैतिकता का समावेश हो और जनता का लोकतंत्र तथा उसकी विभिन्न संस्थाओं पर विश्वास स्थापित हो सके। जिससे जनता और जन प्रतिनिधियों के मध्य सकारात्मक सामंजस्य स्थापित हो ताकि राष्ट्र समग्र रूप से समृद्ध हो सके।

संदर्भ

1. प्रभुदत्त शर्मा, मलफर्ड क्यू. सिबली "राजनीतिक विचार और विचारधाराएँ" अनुवादक की ओर से लिखे गये खण्ड, साभार
2. रमन बिहारी लाल, शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धांत, पृ. 524
3. "नश्नान्नीतिरूच्यते" शुक्रनीति, 1156
4. "सर्वलोकव्यवहारस्थितिनीत्या बिनानहि।" शुक्रनीति 1।11
5. "विपन्नायां नीतोसकलमवशं सीदतिजगत्", हितोपदेश 2/75
6. लज्जाराम तोमर - नैतिक शिक्षा, पृ. 6
7. वही, पृ. 7
8. कर्णसिंह सोमरा, साम्प्रदायिक सद्भाव एवं राजनीति चेतना, पृ. 76-77